पेरिस अस्पताल
२८ नवम्बर, २००५

संदेश संख्या – ८०

समर्पण

समर्पण समझदारी का मधुर संगीत है और दासता है अहंकार का विकार। जब 'तुम' समर्पण करते हो, तब भी तुम्हारा त्वं–भाव (अहंकार), द्वैत रूपी अंधकार में अर्थात् समर्पण की अवधारणा को धारण करने वाला तथा समर्पण की अवधारणा के मध्य, संपु होता रहता है । समर्पण का अभ्यास करना तो उसी अहंकार को नए पाखण्ड के रूप में जारी रखना है। ऐसी स्थिति में, समर्पण आध्यात्मिक–मंडी का महज एक खोखला नारा है । जो संग्रह एवं आत्म–विवर्धन से ऊब चुका है, उसके लिए यह सांत्वना–भर है । समर्पण की पावन एवं पवित्र प्रक्रिया में, सम्पूर्ण–ऊर्जा का स्रोत पा लिया जाता है । समर्पण की यह शुद्ध–ऊर्जा शायद समय के प्रारम्भ से है तथा इसका मस्तिष्क, शरीर, रक्त–कोशिकाओं तथा अस्थिमज्जा पर विलक्षण प्रभाव होता है । इस ऊर्जा से युक्त होने पर, चित्तवृत्ति में विद्यमान सभी प्रकार के विभाजनों का विलय हो जाता है क्योंकि तब चित्तवृत्ति परम्परा, धर्मशास्त्र, सांस्कृतिक अनुबंधन आदि के बोझ से मुक्त हो जाती है । व्यावहारिक कारणों से व्यक्ति उस समय भी परम्परा का पालन कर सकता है, जैसे कि, प्रशीतक–यंत्र (रेफ्रीजरेटर) का उपयोग घर में होता है, किन्तु बोझ के रूप में उसे सर्वत्र ढोया नहीं जाता । आवश्यकतानुसार, प्रशीतक–यंत्र की मरम्मत की जा सकती है या फिर उसे बदला भी जा सकता है । इस समझदारी से शान्ति एवं प्रेम का पूर्ण–भाव प्राप्त होता है । इसके साथ मस्तिष्क स्वयं स्पन्दित होने लगता है । किन्तु किसी व्यक्ति को कोई दूसरा वहाँ तक नहीं पहुँचा सकता । प्रयोजन एवं आकांक्षारहित शुद्ध–समर्पण ही वह चमत्कार कर सकता है । अतः आध्यात्मिक–मंडी के सभी गुरुओं और देवताओं को बाहर निकाल फेंको और तब एक अद्भुत खालीपन का उदय होता है । फिर एक शून्यता का अवतरण होता है । यही सत्यता है ।

तब, जो शाश्वत है उसका अस्तित्व, प्रत्येक पत्थर और पत्ते में भी मालूम पड़ने लगता है । समर्पण तब, स्वाध्याय, तप तथा ईश्वर–प्रणिधान के समन्वय के साथ हृदय में गीत गाने लगता है ।

शिवेन्दु को सुनने से, शायद तुम्हें प्रत्यक्ष सहयता मिलती है क्योंकि तब तुम और अधिक स्पष्टता से समझते हो और तुम्हारी चेतना निर्मल होती है । लेकिन यदि तुम गुरु को केवल प्रेम करते हो या उनका आदर करते हो तो तुम दूसरों के प्रति अनादर–भाव रख सकते हो । उस स्थिति में, दासता के साथ जुड़ना होता है न कि समर्पण की ऊर्जा के साथ। रिट्रीटों में, कुछ भक्तगण शिवेन्दु की बहुत देखभाल करते हैं तथा सेवा के लिए उत्सुक भी रहते हैं किन्तु वे दूसरों के प्रति बहुत कठोर हो जाते हैं। यह ऐसे विरोधाभास की स्थिति है जिसमें समर्पण और समझदारी नहीं होती बल्कि दासता और पाखण्ड होता है, जो प्रेम को न करता है। समर्पण न केवल शिवेन्दु को सुनने के लिए प्रेरित करता है बल्कि भिखारियों, बच्चों, पुष्प, इन्द्रधनुष, पर्वत और पड़ोसी का दुःख–सभी को समान मनोयोग से सुनने के लिए प्रेरित करता है। तुम्हें बलपूर्वक एकाग्र होने की आवश्यकता नहीं है। एकाग्रता दासता की ही अहं–केन्द्रित गतिविधि है और इसके कारण विभिन्न समूहों में शत्रुता उत्पन्न होने लगती है । समर्पण व्यक्ति को संवेदनशील बनाता है । जो संवेदनशील है, वह नवजीवन के लिए सक्षम है और तभी सत्य अस्तित्व में आता है । सत्य का उदय नहीं हो सकता यदि व्यक्ति दासता में प्रतिस्पर्धा के बोझ से दबा हो तथा उसके साथ–साथ होने वाले भय तथा शत्रुता के भाव में हो । समर्पण लोभ, भय, ईर्ष्या और निर्भरता को समाप्त कर देता है और इसमें भक्तियुक्त प्रज्ञापूर्ण अनुसंधान प्रकट होता है । जहाँ समझदारी है वहीं समर्पण है ।

समर्पण अस्तित्व की ऊर्जा का अतिरेक है जबकि दासता पाखण्ड में अत्यधिक संलिप्त होना है । समर्पण स्वयं (जीवन की पूर्णता) को पाने के लिए स्वयं (मन का मिथ्यात्व) को खोना है । अहंकार का समर्पण अस्तित्व का अवतरण है । यह 'बनने' का अन्त तथा 'होने' का उदय है ।

गुरु–प्रक्रिया के प्रति समर्पण हो ।
गुरु के व्यक्तित्व का दास न बनो ।
गुरु–प्रक्रिया को उपलब्ध हो ।
गुरु के व्यक्तित्व के प्रति आसक्त न हो ।
जय गुरु ।
जय समर्पण ।